# शोध-सारांश

हिन्दी उपन्यास के गहन अन्वेषण से विदित होता है कि साहित्य में स्त्री समस्या एवं स्त्री अस्मिता को लेकर निरन्तर लेखन कार्य जारी है। आधुनिक उपन्यास में चित्रित स्त्री चरित्र आत्मनिर्भरता, महत्वाकांक्षा, आत्मबोध, स्वतन्त्र चेतना एवं अस्तित्व के पहचान से ज्यादा जीवन के संघर्षों एवं अपरिचित कुण्ठाओं से दु:खी है। धर्म, समाज, अर्थ आदि कई स्तरों पर शोषित स्त्री अस्तित्व की पहचान हेतु पुरानी परम्पराओं एवं रूढ़ियों को तोड़ती नज़र आती है। दिव्या एवं नज़राना ऐसी ही आधुनिक स्त्री चरित्र हैं, जो पितृसत्तात्मक समाज द्वारा गढ़े गए रूढ़िगत परम्पराओं को खण्डित करती है। आधुनिक हिंदी उपन्यास में आज भी पारम्परिक समस्याओं के रूप में स्त्री अस्मिता एवं स्त्री संघर्ष का स्तर मुख्य रूप से विद्यमान है।

20वीं शताब्दी के पांचवें दशक में प्रकाशित 'यशपाल' कृत उपन्यास 'दिव्या' (1942) एवं 21वीं शताब्दी के दूसरे दशक में लिखा गया 'भगवानदास मोरवाल' कृत 'हलाला' (2016) में विन्यस्त धर्म में स्त्री जीवन, स्त्री संघर्ष के प्रश्नों को कहाँ तक उठाया गया हैं? धर्म, स्त्री को किन-किन रूपों में प्रभावित करता है? सभी धर्म में स्त्री विषयक दृष्टिकोण एक ही क्यों होता है? अपने जीवन से संबंधित निर्णय लेने की स्वतन्त्रता उसे कहाँ तक है? उपन्यास में उपस्थित पितृसत्ता नारी जीवन को किन रूपों में एवं कहाँ तक प्रभावित करता हैं? आदि तथ्य मुख्य रूप से विद्यमान हैं। प्रस्तुत दोनों उपन्यास 'दिव्या' एवं 'हलाला' में स्त्री अपने 'स्व' को पहचानने के क्रम में है। वह अपने अस्तित्व को नए सिरे से तलाश करती है और इसकी परिणति त्रासदपूर्ण न होकर सुखान्त होती है।

मेरे शोधकार्य में आधुनिक उपन्यासों की स्त्री पात्र घर के बाहर व भीतर, पारम्परिक एवं सामाजिक स्तर पर जिन समस्याओं से जूझ रही है उन्हें रेखांकित किया गया है। धर्म से प्रभावित स्त्री-जीवन के संघर्षों उनकी मनोव्यथा एवं एकाकीपन को संदर्भित उपन्यासों के माध्यम से देखा गया है। चयनित उपन्यास में विन्यस्त स्त्री पात्र पारम्परिक रूप में गढ़ी जाती रही देवी, प्रेयसी, गृहणी के पूर्वाग्रहों को तोड़ किन रूपों में उपस्थित होती है उनका तुलनात्मक दृष्टि से अध्ययन करने का प्रयत्न प्रस्तुत शोध कार्य द्वारा हुआ है। 'दिव्या' एवं 'हलाला' उपन्यास में स्त्री पात्रों के निर्माण एवं उनके स्व से जुड़े हुए प्रसंगों में धर्म, परिवार, प्रेम, विवाह, संतान एक भिन्न स्तर पर देखने को प्राप्त होता है।

प्रस्तुत शोध में कुल चार अध्याय हैं, चार अध्यायों में से प्रथम अध्याय उपन्यास की अवधारणा एवं स्वरूप पर बात करता हुआ उसके सैद्धान्तिक पहलू पर विचार करता है। शोध प्रबन्ध के द्वितीय अध्याय में रचनाकारों के व्यक्तित्व एवं उनके कृतित्व को विस्तृत रूप से व्याख्यायित किया गया है तथा परिचयात्मक रूप-रेखा तैयार की गयी है। तृतीय अध्याय में धर्म के स्वरूप एवं 'दिव्या' तथा 'हलाला' में धर्म की अभिव्यक्ति एवं स्त्री जीवन को विस्तार रूप से विश्लेषित किया गया है। इस अध्याय में धर्म के नाम पर स्त्री उत्पीड़न एवं उसका आदर्शों एवं सिद्धान्तों के नाम पर दोहन करता समाज वर्णित है। चतुर्थ अध्याय दोनों उपन्यासों के तुलनात्मक अध्ययन के रूप में उपलब्ध है। इसे दोनों उपन्यासों में व्याप्त साम्य एवं वैषम्य आदि को आधार बनाकर लिखा गया है। इस अध्याय में स्त्री जीवन का द्वन्द्व एवं स्त्री जीवन में हस्तक्षेप करते धार्मिक परम्पराओं एवं समाज से संघर्षरत स्त्री जीवन विद्यमान है।

अनेक धर्मों में विद्यमान आदर्शों, सिद्धान्तों, नियमावलियों आदि में विभिन्नता देखी जा सकती है किन्तु स्त्री की स्थिति उसकी दशा प्रायः हर धर्म में एक जैसी है। यह शोध, उपन्यास में अभिव्यक्त धर्मसत्ता एवं स्त्री जीवन को समझते हुए इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि धर्म के मूल में उपस्थित मानवतावादी स्वरूप की उपेक्षा कर उसका पितृसत्तात्मक भाष्य तैयार किया गया है।

प्रस्तुत दोनों उपन्यास 'दिव्या' एवं 'हलाला' धर्म की आड़ में हो रही नारी शोषण पर केन्द्रित वह आख्यान है, जो स्त्री सन्दर्भित बुनियादी सवालों को उभारता है तथा साथ ही स्त्री चरित्रों की सजगता, दृढ़ता एवं कुप्रथाओं, रूढ़ियों व मिथ्याडम्बरों के खिलाफ आक्रोश की भावना भी व्यक्त करता है।

qq